IJAER/ July-August 2019/Volume-8/Issue-1 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

# परिवर्तन कविता के आधार पर पंत जी की काव्य प्रतिभा का मूल्यांकन

**डॉ योगेश कुमार यादव**
सहायक प्रोफेसर हिन्दी
राजकीय महाविद्यालय नारनौल
महेन्द्रगढ़ हरियाणा।

## सार

'भारतीय कायव्यशास्त्र की भूमिका' में लिखा है कि, ''छायावाद में कला की यत्नज तथा अयत्नज दोनों प्रकार की शोभा का उत्कर्ष मिलता है। इस उत्कर्ष मे सबसे अधिक योगदान पंत जी का है। उनमें छायावाद की मणि–कुट्टिम कला का अपूर्ण वैभव है। वासन की वैदर्शी रीति और उनके समग्र गुणों की संपदा पंत जी के काव्य से अधिक और कहाँ मिलेगी।''[1]

'उछ्वास' से लेकर 'वीणां' ग्रंथि, 'पल्लव' और 'गुंजन' तक की कविता का सम्पूर्ण भावपट कवि पंत की सौन्दर्य चेतना का काल है। पंत जी ने अपनी सौन्दर्य चेतना को संदेह रहित–अन्तदृष्टि से जोडते हुए कविता को परिभाषित किया। कविता के उपादानों–शब्द, शिला और अनुभव संस्थान पर न जाकर पंत जी ने उसका संबंध समय की भीतरी श्यन्ता से जोड़ा। समय की यह परिपूर्णता कवि को निजी आन्तरिक परिपूर्णता से बांधी गई है, जिसे उन्होंने 'परिपूर्ण क्षणों की वाणी' कहा है। 'पल्लव' की भूमिका में उद्वत इस 'परिपूर्ण क्षणों की वाणी' को उनके सारे काव्य की नैतिक दृष्टि से जोड़ा जा सकता है। नैतिकतावादी दृष्टिकोण के साथ–साथ प्रकृति–प्रेमी भाववादी विचारधारा एवं दर्शनिकता का अच्छा सामन्जस्य 'परिवर्तन' नामक कविता में देखने को मिलता है।

'परिवर्तन' कविता पंत जी के तीसरे काव्य संग्रह 'पल्लव' में सन् 1925 में प्रकाशित हुई। पंत जी के बारे में प्रसिद्ध था ि कवे एक निश्चित आइडियोलॉजी में बंधे नहीं रह पाते। यह एक कवि को व्यापक विचार पटल तो प्रदान करता है। साथ ही साथ अति व्यापकता एवं अनियन्त्रित विचार प्रवाह के कारण आलोचना का कारण भी बनता है। ऐसा ही कुछ पंत जी के साथ हुआ। इतने विपुल एवं समृद्ध लेखन के होते हुए भी पाठकों एवं विचारकों ने इनकी छवि का एक सीमित दायरा निश्चित कर, प्रकृति के साथ चरवा कर दिया। यह भी सत्य है कि मानव सत्यों के अन्वेषण के लिए एक व्यापक विचार पटल की आवश्यकता होती है। पंत जी ने इसी का प्रयोग करते हुए 'परिवर्तन' कविता में गूढ़ मानव प्रकृति एवं सूक्ष्म से सूक्ष्मतर परिवर्तनों का अत्यन्त ही वेदनायुक्त एवं निर्वेद भाव से वर्णन किया जाता है।

'परिर्वतन' कविता अपनी प्रकृति में एक संबोधनात्मक कविता है। यह संबोधन वास्तव में सौंदर्य सृष्टि के प्रति एक आंतरिक और व्यक्ति विशिष्ट संगोपनता की वजह से पैदा हुआ है। डॉ. दूध नाथ सिंह ने पंत जी को संपूर्णता का कवि' कहते हुए, उनकी संबोधनात्मक शैली पर विचार करते हुए लिखा है। कि ''सहसंपर्क की इस कथन शैली से संपूर्ण कविता का कलात्मक धरातल एक निजी पट पर खुलता है और उसके अर्थ संकेत

अभिव्यक्ति को एक सागर शलीनता विनम्रता और संकोच से बाँध देते हैं। साथ ही कवि अपनी अभिव्यक्ति और भाव संवेदना के बीच किसी भी दूसरे अस्तित्व को आने नहीं देता। इससे कविता के काव्य और इसकी संरचना में एक दूसरे ढंग का संप्रेषण और सौंदर्य उदभासित होता है, जो साधारण रूप से संभव नहीं हो पाता।''[2]

अरे निष्ठुर परिवर्तन !

तुम्हारा ही ताण्डव नर्तन

विश्व का करूण विवर्तन!

अहे दुर्जेय विश्वजित्!

नवाते शत सुरवर, नरनाथ

तुम्हारे इन्द्रासन तल माथ ....

2. तारापथः संपादक – डॉ. दूध नाथ सिंह

संपूर्णता का कवि

पृष्ठ संख्या 24

इस प्रकार सम्पूर्ण कविता के मूल में पंत जी, वेदयुगीन परंपरा पर अटूट विश्वास रखते हुए भी पश्चाताप जैसी मनोदशा का वर्णन करते हैं।

कवि प्रतिभा का सबसे बड़ा प्रमाण है कि कोई कवि किस स्तर तक काव्य भाषा को जन सामान्य की भाषा के समतल लाकर खड़ा कर सका है। पंत जी इस कला में हस्त सिद्ध है। खासकर 'परिवर्तन' के परिप्रेक्ष्य में यह बात शत–प्रतिशत सच है। तत्समता से अलग हटकर शब्दों के तदभर्वाकरण पर उन्हें ज्यादा विश्वास रहा है। बल्कि यों कहना चाहिए कि भाषा को और शब्द को वाक्य विधान से अन्दर की ओर मोड़ने का काम पंत जी ने ही सर्वप्रथम किया। अर्थ को अन्दर की ओर लौटालने से पंत जी ने कविता में पहली बार अमूर्त उपगानों, अप्रस्तुत विधानों और लाक्षणिक प्रयोगों को सर्वथा एक नया विधान और सौंदर्य दिया। कल्पना की उच्छल चित्रगयता इस संदर्भ में दृष्टव्य है –

अये, विश्व का स्वर्ण स्वप्न, संसृति का प्रथम प्रभात,

कहाँ वह सत्य, वेद विख्यात ?

दुरित, दुख दैन्य न थे जब ज्ञात,

अपरिचित जरा मरण भ्रू पात!

काव्य भाषा के स्वरूप पर विचार करते हुए पंत जी ने भाव और भाषा के सामन्जस्यं पर बल दिया है। वे कहते है,'' जहाँ भाव और भाषा में मैत्री अथवा ऐक्य नहीं रहता, वहाँ स्वरों के पावस में केवल शब्दों के बहु–समुदाय'ही दादुरों की तरह इधर–उधर कूदते–फूदकते तथा समध्वनि करते सुनाई देते है।''[3]

समन्जस्य के अतिरिक्त राग और चित्रात्मकता को भी पंत जी काव्य भाषा के लिए मानते हैं। शायद इसलिए शब्दों के चुनाव और भाषा की कार्यरतता अक्सर रंगों और क्रियाओं के माध्यम से प्रकट होती है। इस रूप में पंत जी के प्रारंभिक–काव्य में एक सर्वथा अधुनातन तत्व नाटकीयता (Dramatre Element) का प्रादुर्भाव दिखाई देता है

अखिल यौवन के रंग उभार

हड्डियों के हिलते कफाल

कुचों के चिकने, काले व्याल ...

आज बचपन का कोमल गात

जरा का पीला पात।

3. शिल्पा और दर्शनः सुमित्रानन्दन पंत

पृष्ठ संख्या – 8

पंत जी ने 'पल्लव' की एक कविता में एक पंक्ति लिखी है– वत्स, जग है अज्ञेय महान्'। संत जी के काव्य विकास के अगले शिखरों का सूक्ष्म संकेत इस एक पंक्ति में ही मिल जाता है। उनकी 'परिवर्तन' कविता में संसार की इस अज्ञेयता का अंत होता है और 'अभिज्ञान' अक्षुण्य रहता है। 'परिवर्तन' का प्रारम्भिक अवसादपूर्ण वर्णन अन्ततः वास्तविकता एवं अक्षुण्य रहने वाले ज्ञान में ही परिवर्तित होता है–

तुम्हारा ही अशेष व्यापार,

हमारा भ्रम, मिथ्यांत्कार

तुम्हीं में निराकार साकार,

मृत्यु जीवन सब एकाकार।

जीवन में एकमात्र ब्रहम सत्य को प्रभावित करना कवि की नैसर्गिक प्रतिभा को ही कर्म है। इसी बात को आगे बढाते हुए डॉ. दूध नाथ सिंह ने लिखा है कि, ''यह 'आत्म प्रबुद्धता' ही पंत जी की कविता के इस नये परिवर्तन को सूचित करती है, जिसके भीतर से कवि इस देश और इस संस्कृति की निरीहता और दैन्य भरी जड़ता को पहचानता और आत्मसात् करता है। अनित्य से नित्य की ओर बढने का क्रम, भावनात्मकता से बौद्धिकता का संघर्ष और अन्दर से बाहर की ओर कवि के भाव पट का फैलाव।''4

पंत जी ने अपनी कविता में कथ्य की संवेदना एवं उसकी तीव्रता के अनुरूप ही छंदों का भी निमार्ण किया है। 'परिवर्तन' कविता में भय एवं विनाश का चित्रण आते ही छंद में भाषाओं का प्रसार हो जाता है। फिर तथ्य कथन पर आते आते एक निराशापूर्ण निष्कर्ष पर पहुँचकर, छंद संकुचित होकर, एकमात्र शब्द में सिमट जाता है।

मृत्यु तुम्हारा गरल दंत कंचुक कल्पान्तर

अखिल विश्व का विवर

वक्र कुण्डल

दिऽ.गण्डल!

इसी प्रकार कवि द्वारा काव्य संवेदना को और अधिक पुष्ट करने वाले बिंब एवं प्रतीकों का भी प्रयोग किया है। सम्पूर्णता में अध्ययन करने पर कविता में दार्शनिकता के पुर पाए जाते हैं। विचारकों एवं आलोचकों का मत है कि पंत जी आचार्य अरविंद के सिद्धान्तों से बहुत प्रभावित थे। श्री अरविंद के दर्शन–

4. तारापथः संपादक – डॉ. दूध नाथ

संपूर्णता का कवि

पृष्ठ संख्या – 32

की मूलभूत विशेषता है – समन्वय। इसी समन्वय का प्रयोग पंत जी भी, राग एवं चित्र में, शब्द एवं भाषा में सभ्यता एवं संस्कृति में, भौतिकता एवं आध्यात्मिकता में, तर्क एवं बुद्धि में विज्ञान एवं परंपरा में तथा जीवन के विभिन्न 'विरूद्धों में सामन्जस्य' बनाते हुए स्थापित करने का प्रयास करते हैं। "The movement of energy the becoming are also a fact, also a reality the supreme intuition and its corresponding experience may correct the other, may go byword may suspend but do not existence and of world existence infect of being fact of brewing " 5

'परिवर्तन' कविता की दार्शनिक्ता का एक पक्ष इसी की समकालीन 'कामायनी' में भी देखा जा सकता है परिर्वतन का निर्वेद स्वर जयशंकर प्रसाद की संवेदना से भी मेल खाता है किन्तु यहाँ एक महत्वपूर्ण तर्क यह है कि जिस सामाजिक, राजनैतिक, एवं सांस्कृतिक वातावरण में ये रचनाएं रची जा रही थी, उनसे इनका विरोधाभास क्यों हैं ? यह एक नए अनुसंधान का भी विषय है कि 'कामायनी' एवं 'परिवर्तन' की ऋणात्मक गति तद्युगीन क्रान्तिकारिता से अछूती क्यों है ?

Sri Aurobindo: The life Dirvine vol I page No. 93

उसी समय में रची जाने वाली राम की शक्ति–पूजा में ऐसी निराशा क्यों है ? प्रेमचंद द्वारा रचित गोदान में अन्ततः त्रासदी का विभत्स वर्णन क्यों है ? ऐसे समय में जब देश पल–प्रतिपल स्वतंत्रता की ओर उन्मुख था, सामाजिक एवं साहित्यिक चेतना में इतना ठहराव क्यों था ? अतः आवश्यकता मात्र छायावादी कवियों को प्रकृति प्रेमी अथवा पलायनवादी कहकर, हाशिए पर डालने के बनाए, उन तत्वों की पुष्टि करने की

है जिनमें ये अभिप्रेरित एंव संचालित थे। इन कवियों एवं रचनाकार के मन के महातल में मौन बैठे इस आक्रोश को ढूंढने की आवश्यकता है जिन्हें व्यापक अभिव्यक्ति नही मिल पाई। तभी शायद छायावादी पूर्वग्रहों से हम स्वयं को एवं संपूर्ण काव्य को सीमित परिसीमा से बाहर निकालकर उन्हे उनके वास्तविक मूल्य से रू–ब–रू करा सकेंगें।